ओड़िआ कहानी

सुदीर्घ पथ

तरुणकांति मिश्र

अनुवाद: दीप्ति प्रकाश

बाहर दरवाज़े पर किसीने दस्तक दिया। बहुत ही धीरे से। जैसे कि सुनाई न दे। दरवाज़ा खुला था। अंदर आने के लिए कोई बादा न थी।

सुधाकर ने इंतज़ार किया। कान दे कर।

अब कान ही उनके शरीर का सबसे सक्रीय अंग। बहुत पहले से आँखों की रोशनी कम होती आई थी। ऑपरेशन के बाद एक आँख पूरी तरह खराब हो गई थी। दूसरी आँख घर के काम–काज के लिए पर्याप्त थी।

कुछ दिनों से उनकी नाक भी उन्हें धोखा देने लगी है। जैसे कि इस पिछले गोबिन्द द्वादशी की रात में, अचानक उन्हें लगा...

दरवाज़े पर फिर से खट्–खट् की आवाज़ें। इस बार जरा जोर से।

सुधाकर ने कहा, दरवाज़ा खुला है। अंदर आओ।

इस समय तीन लोगों की ही आने की संभावना रहती है। पहले पिल्टु, घर का काम–काज संभालने वाला छोकरा। लेकिन आज वह नहीं आएगा, वह अपने मामाजी के यहाँ गया है। हालाँकि बात झूठी है। वह मामाजी के यहाँ कभी नहीं जाता है, मामाजी के साथ उस का साँप–नेवला का रिश्ता है। वह गया है उस बेहया छोकरी के पास, नाम क्या उसका...रेशमी या रोशनी ?

और एक आने वाला है गंगाधर टेक्नीसियन। पैथो लॉब में काम करता है। हर महीने पहले हफ्ते में आ कर ख़ून ले जाता है, कभी कभी पेशाब। दो हफ्ते पहले वह आया था, अब उस का आने का समय नहीं हुआ है।

तीसरा है प्रेमानंद।

प्रेमानंद मगर आया नहीं। वह आ नहीं सकता। दो दिन पहले वह बॉथरूम में गिर गया था। उसको हाई ब्लॉडप्रेसर है।

सुधाकर का भी है। और भी दो–तीन किस्म की बीमारियाँ हैं। प्रेमानंद बोलता है, तेरी तो तीन बीमारियाँ, मेरी लेकिन पाँच।

बिलकुल बचपन से ही प्रेमानंद के साथ उन की प्रतिद्वंद्विता थी। पढ़ाई में भी, दूसरी चीज़ों में भी। नौकरी अलग–अलग रही, अलग–अलग शहरों में, इसलिए प्रद्विंद्विता की पैनी धार समय के साथ कम हो गई थी। मिलना जुलना भी। नौकरी से अवकाश लेने के बाद फिर से रिश्ते मजबूत हुए हैं। उठना–बैठना, गप्पेबाज़ी साथ साथ।

दरवाज़े पर फिर हल्का सा दस्तक, किसीकी अनजानी सी परछाई।

सुधाकर बिस्तर से उठना चाहा, लेकिन सिर भारी लग रहा था, दोनों पैर थके थके से लगते थे, दूर से चल कर आने जैसा। उन्होंने फिर कहा:

–अंदर आओ, दरवाज़ा खुला है।

चाहे जो भी आए, अच्छा लगेगा। हो सकता है गनेश जी की पूजा के लिए चंदा माँगने आए नन्सेन्स क्लॉब के मेम्बर, छत्तीस परसेंट पर डिटरजेंट पाउडर बिकने आए सेल्समैन, या छियालीस बटा तीन प्लॉट को ढूँडता हुआ राह भटका हुआ राही।

चंदा माँगने के लिए आए लड़के वह धमक दे कर बिदा नहीं कर देंगे, पर्स से रुपए निकाल कर खुशी से देंगे, बालेंगे, भक्ति के साथ पूजा करना, गनेश जी से विद्या माँगना, अच्छे विचार माँना। पूजा के बाद आ कर कहना पूजा अच्छे से हुई कि नहीं।

डिटरजेंट वह खरीदेंगे जरूर, लेकिन रखेंगे नहीं, पिल्टु के हाथ में देंगे, बोलेंगे, ले इस में तेरे पेंट–शर्ट अच्छे से साफ़ कर, आजकल तू जिस तरह से बदबू देता है न।

राह भटके आदमी को बड़े प्यार से पास में बैठाऐंगे, पूछेंगे, प्यास लगी होगी, पानी पीएँगे! फिर बोलेंगे, छियालीस बटा तीन? वह तो सर्वश्वर प्रहराज का घर है! बस यहीं उस बाईं ओर की मोड़ पर, सिर्फ पाँच मिनट का रास्ता है।

वह आदमी आधा ग्लास पानी पी कर उठ जाएगा। ठक् से ग्लास को टेबल पर रख कर बोलेगा, इस मुहल्ले के लोग इतने असभ्य हैं। इतना कहने के लिए किसी के पास समय नहीं है! उस के बाद वह तूफान की गति से निकल जाएगा।

सुधाकर का लेकिन इच्छा नहीं थी कि वह आदमी इस तरह से चला जाए। उनको उम्मीद थी कि पानी पी कर वह आदमी पाँच मिनट तक बैठेगा, उस बीच सुधाकर पूछेंगे वह कहाँ से आया है, किस शहर से। अब उस शहर का मौसम कैसा है, समुद्र से कितनी दूरी पर है वह शहर।

उनकी बड़ी इच्छा होती है कि किसी के साथ गप्पे मारते, किसी न किसी के साथ। कुछ न कुछ।

अंदर आने के लिए तीन बार कहने के बावजुद भी परदे की आड़ से किसी का चेहरा दिखाई न दिया। झूठे दिलासे की तरह ठंडी हवा का एक झोंका घर के अंद फैल गया। फिर सब कुछ पल भर के लिए रुक सा गया।

आँखों में हल्की सी नींद आकार ले रही थी शबनम की हल्की सी बूँद जैसी। कल रात नींद न आई, रह रह कर सीना जैसे जैसे रुंधने लगा था।

एसे तेरा कितने समय तक होता है, हफ्ते में कितनी बार?

प्रेमानंद जरा उद्वेग के साथ पूछता है। मैं सोचता हूँ एक बार तू डॉक्टर त्रिपाठी को दिखा। मेरा उन से जान–पहचान है। ले जाऊँगा कल। कल शाम को चलें?

ठीक है कभी जाएँगे। एक रूखा सा जवाब इस तमाम आलोचना पर पूर्ण विराम लगा देता है।

सच में प्रेमानंद बहुत भावुक है। उस दिन वह बच्चे की तरह रोने लगा था। घर में क्या कोई अशांति हुई थी, छोटी बहू के साथ को तर्क–वितर्क। वही बात बोलते बोलते उस की आँखों में से आँसू बहने लगे।

प्रेमानंद के तीन बेटे, दो बेटियाँ, सब अच्छे से हैं, शादी–व्याह भी अच्छे से हुआ है। तीनों इसी भुवनेश्वर में हैं। अच्छे अच्छे लिबास में प्रेमानंद आता है, बेलता है इसे मेरे बड़े बेटे ने दिया है, सिंगापुर गया था दफ्तर के किसी काम में।

उस मामले में सुधाकर का नसीब थोड़ा छोटा है। अलका की गोद में संतान नहीं आइ थी, और वह भी असमय में चली गईं, बहुत ही अचानक।

पाँच बच्चों का सौभाग्य मिलने के बावजुद, बड़ा दु:खी था प्रेमानंद। बहुत ही तनहा। वक़्त मिलते ही सुधाकर के पास चला आता था।

कुछ वक़्त गुजर जाता था पुराने दिनों को याद करके। फिर उन में से कोई एक चुप हो जाता था। आखिर में प्रेमानंद कहता था, अच्छा तो फिर चलता हूँ भाई। उधर हमारी छोटी बहू राह देख रही होगी, लेकचर झाड़ने के लिए।

दु:ख की बदलियाँ अब प्रेमानंद की दोनों आँखों पर छाने लगी थी।

प्रेमानंद एक बार खुदकुशी करने जा रहा था। एम.एससी. फाइनाल इयर में। पारमिता की शादी का कार्ड़ हाथों में ले कर। पारमिता को वह प्यार कर रहा था, इकतरफ़ा प्यार। दोनों के बीच बातचीत थी। कॉपी–किताब की लेन–देन। लेकिन उस ने मुँह खोल कर कभी अपने दिल की बात नहीं कही थी, इसी विश्वास से कि पारमिता को उसके दिल का हाल पता है।

इतनी सी ज़हर खाने से हमारे होस्तल की कानी बिल्ली भी नहीं मरने वाली, तेरी बात छोड़...कह कर सुधाकर ने उस के हाथ से ज़हर का बोतल खिंच लिया था।

काफ़ी दिन तक आँसू गिराने के बाद प्रेमानंद फाइनाल एग़्जाम में फॅस्ट आया था, पहली बार के लिए सुधाकर दूसरे स्थान पर चले गए थे।

:पारमिता अभी कहाँ है जानता है!

कभी एक दिन अचानक प्रेमानंद ने पूछा था, किसी शाम में।

:हाँ, जानता हूँ। आडमंटन में। सुधाकर ने कहा था। आसानी से भूल जाने वाली लड़की नहीं थी पारमिता।

:नहीं, वह अभी आशभिल् में है।

जरा चुप रह कर प्रेमानंद ने अपना मंतव्य रखा, बहुत ही खूबसूरत है।

बोला, अमेरीका में सब से खूबसूरत जगह है आश्भिल। स्मोकी माऊँटेन के पास।

शाम के मंद अँधकार में प्रेमानंद की गले की आवाज़ दूर-दराज़ की आवाज़ की तरह सुनाई दी:

...इतनी खूबसूरत शहर में रह कर, इतने अच्छे जीवन के भीतर, पारमिता का क्या इस देश की बातें याद न आती होंगी, यहाँ की शाम-व-सुबह, बरसात की रातें, रात की रानी की खुशबू! उसे कभी कभी पीड़ा न पहुँचती होगी!

सुधाकर के सीने के अंदर किसी जगह पर जरा दर्द हुआ, साँसें रुँध जाने जैसी। उन्होंने बिस्तर से उठ कर बैठने की कोशिश की। सहज होने की कोशिश की।

वह उठ नहीं पाए। उसी तरह पलंग पर पड़े रहे, तकीए पर सर भारी भारी सा लग रहा था, पुराने बोझ की तरह।

नशों में ख़ून प्रवाहित हो रहा था, राह भटका अभिभाष की तरह। छाति तले परत परत स्थविरता। हवा लटकी हुई थी सिर के ऊपर की पंखें की निश्चल पंखों में।

अब सुबह है या शाम! दीवार की घड़ी में कितने बजे हैं?

घड़ी बंद हो गई है काफी कुछ दिनों से। याद आती है कि ठीक करा लूँ, फिर याद नहीं रहती। जैसे भी हो काम चल जाता है।

बहुत सारी बातें अब तो चल जाती हैं। चावल के साथ दाल न भी है तो, सब्जी में नमक की कमी है तो, दो दिन तक न नहाए तो, रात भर ठंड लगे तो भी।

:उफ, तुम! मेरे चले जाने पर एक दिन भी रह पाओगे तुम! एक रात! जरा सी गड़बड़ी में जिस का सारा कुछ बिगड़ जाता है...हँसती हुई अलका बोलती हैं।

सब कुछ अब सपना जैसा लगता है। सोचा नहीं जाता कि इस गर में और कोई थी, जो थी समय को घेर कर और वह अकली ही थी सर्वमय। हालाँकि सुधाकर थे, थे साए की तरह, अभिलाष की प्रतिकाया की तरह। अलका की कोई संतान न थी, कोई सहोदर भी। सुधाकर के भीतर ही वे इन सब को ढूँढ पा रही थीं। सुधाकर को भी अच्छा लगता था वह त्रिकाय आनंद।

साँस लेने में जरा मुश्किल हो रहा था, सिर में कैसे चक्कर आने का भाव। पहाड़ पर चड़ने जैसा। उन्होंने आँखें बंद की।

संभव है कि बाहर बूँदा-बाँदी शुरू हो चुकी है। टिप-टिप बारीश। हल्की हल्की ठंडी हवा अंदर चली आ रही है।

वही ठंडी हवा लगने से सुधाकर को जरा आराम मिला। सीने पी पीड़ा कुछ कम हुई।

चल भर में बारीश छूट गई। लेकिन हवा तकिए को सट कर रह गई।

दूर से कुछ अस्पष्ट सा स्वर सुनाई दे रहा था, किसी दूर-दराज से। जरा कान देने पर गाना सुनाई दिया, बहुत ही पुराना गीत। स्वर मालूम पड़ता था, लेकिन बोल अनजाने थे।

शब्द पहचानना जरूरी न था। स्वर ही सबकुछ है। सुधाकर उस स्वर को सुनने लगे। यह गीत क्या अलका गा रही थी बारीश से भीगे अँधकार में! भोर के ताराओं की ठंडी छाँव में!

क्या कोई फूल किला है इधर कहीं नज़दीक में! अभी अभी: अजीब है उसकी सुरभी, अपूर्व है महक।

फिर सीने में पीड़ा हुई। अलिंद और आलय में जैसे फँसती जा रही थी मकड़ी, मंद हो रहा था नशें के अंदर का प्लावन। धीरे धीरे पीड़ा बढ़ने लगी।

:उफ, कैसा अंधकार!

किसी का स्वर सुनाई दिया, अति परिचित। इतना परिचित है वह स्वर कि अचानक कुछ नहीं हुआ।

:इस अंधकार में बहठ कर तुम क्या करते हो!

अलका आ कर पास में खड़ी हो गई। आँगन में खिला हुआ फूल अब मानो बहुत ही नज़दीक में।

अलका ने बत्ती नहीं जलाई, संभव है कि वह सोच रही थीं कि उन के आने पर और बत्ती जलाने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

वह बिस्तर की ओर खिंचते गए। अनजाने फूल की ख़ुशबू धरती की चारों ओर फैल गई। सुधाकर को हाथ उठाने में जरा मुश्किल हो रहा था। अंधेरे में टटोलते हुए उन्होंने एक शरीर की अदृश्य ज्यामिति का ठिकाना पाया। एक मुलायम हाथ, सुंदर सघन दो उरोज और दो पंखुड़ियाँ जैसी होंठ।

:अलका! उन्होंने गंभीर स्वर में पुकारा, लेकिन कोई जरूरत नहीं थी।

कोमल दो होंठों ने सुधाकर के माथे को छूँआ। गरम साँसों ने छूँआ।

सुधाकर समझ रहे थे कि उन को अब कुछ कहना नहीं है, सुनना भी। वह कोशिश कर रहे थे कि जरा सो जाएँ, सुदीर्घ यात्रा के प्रस्तुति–पर्व में।

–(मूल शिर्षक : दीर्घ पथ)

A A